International Journal of Physical and Social Science
Vol. 8 Issue 12, December 2018
ISSN: 2249-5894 Impact Factor: 6.644
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

शास्त्रीय संगीत की सुगम विधायें- आधुनिक संदर्भ में

डॉ. संगीता गोरंग
एसोसियेट प्रोफेसर
संगीत विभागाध्यक्षा
के.वी.ए. डी.ए.वी. कॉलेज फार वूमन,करनाल

सारांश

शास्त्रीय संगीत पूर्व निश्चित सिद्धान्तों एवं जटिल नियमों के अन्तर्गत गाया जाता है। शास्त्रीय-उपशास्त्रीय गीत के प्रकारों में ध्रुपद, धमार, ठुमरी, टप्पा, तराना, दादरा, गजल, भजन आदि आते हैं। सुगम गीत की अपनी स्वतन्त्र विशेषता होने के अतिरिक्त इसमें लोक तथा शास्त्रीय गीतो का सम्मिश्रित प्रभाव होता है सुगम गीतों में यदा-कदा विदे-ी गीतों एवं वाद्यों का प्रभाव - जैसे स्वर संयोजन (कार्ड सिस्टम) या विदेशी वाद्योंका प्रयोग भी सम्मिलित रहता है।

संगीत की इसी श्रेष्ठता के कारण महर्षियों एवं आचार्यो ने इस कला को "पंचम वेद" या "गांधर्व वेद" कहा हैं संगीत के दो रूप प्राचीनकाल में प्रचलित हुएः

1. मार्गी, 2. देशी।

कालान्तर में मार्गी संगीत का लोप हो गया तथा देशी संगीत दो रूपों में विकसित हुआ। एक वह था, जो शास्त्र पर आधारित था तथा विद्वानों, गुणियों एवं कलाकारों के अध्ययन तथा साधना का विषय बना, जिसे आज हम शास्त्रीय संगीत कहते हैं, अन्य वह था, जो काल और देश के अनुरूप प्रकृति के स्वच्छन्द वातावरण में स्वाभाविक रूप से पलता हुआ विकसित होता रहा।

संगीत का माध्यम अति सूक्ष्म है, इसकी सृष्टि नाद से हुई है। नाद ब्रह्म है और मनुष्य का अन्तःकरण ब्रह्म-स्वरूप हैं अतः संगीत एक प्राकृतिक तत्त्व है। संगीत एक कला तो है ही। इसका सीधा सम्बन्ध मनुष्य से संयुक्त होने के कारण हम इसे सामाजिक विज्ञान, सोशल साइंस या बायोनेचुरल साइंस भी कह सकते हैं। यह एक ऐसी कला है, जो स्वतः में पूर्ण है। इसलिए ललित कलाओं में इसे सर्वश्रेश्ठ माना गया है।

शास्त्रीय संगीत (परिभाषा-विशेषता)

यह मार्गी संगीत के नाम से भी जाना जाता है। इसका उद्देश्य व्यक्तिगत साधना तथा ईश्वर प्राप्ति रहा है । "हिन्दी शब्द कोष में शास्त्रीय का अर्थ-शास्त्रोक्त, वेद विहित, शास्त्रो में बताई गई विधि सम्बन्धी, शास्त्रविहित एवं शास्त्रानुकूल है।" शास्त्रीय गायन पूर्व निश्चित सिद्धान्तों एवं जटिल नियमों के अन्तर्गत गाया जाता है। शास्त्रीय-उपशास्त्रीय गीत के प्रकारों में ध्रुपद, धमार, ठुमरी, टप्पा, तराना आदि आते हैं। यह स्वर प्रदान प्रस्तुति होती है। शास्त्रीय गायन के दिग्गज गायकों को गायन विशेषता के आधार पर उनके नाम से घराने चलते है। इसका प्रशिक्षण किसी योग्य गुरु के शिक्षण-प्रशिक्षण में नियमों का कड़ाई से पालन करते हुये जीवन पर्यनत होता है। शास्त्रीय गायन के महत्वपूर्ण तालों में एकताल, तिलवाड़ा, लयकारियों (आड़-कुआड़-बिआड़) द्वारा दर्शाया जाता है। इसके संगीत वाद्यों में तानपुरा, वायलिन, हारमोनियम, सारंगी, तबला, पखावज, मृदंग आदि है। शास्त्रीय गायन में पाँच से कम स्वरों वाला कोई राग नही होता। शास्त्रीय संगीत के रागों की बन्दिशें सैकड़ो वर्षो से नियमबद्ध हो उन्ही स्वर सिद्धान्तानुसार गायी जा रही है। शास्त्रीय गीत के रागों को राग समय सिद्धांतानुसार गाने का प्रचलन है।

सुगमगीत (परिभाषा-विशेषता)

सुगमगीत के शब्द तथा काल विशेष के वर्तमान रुझान और नयेपन को देखकर बनायी जाती है। इसकी रचना में व्यक्ति विशेष का योगदान होता है जो रचियता उच्च कोटि के कवि होते है तथा सर्जक कलाकार होने के कारण इनकी रचनाओं को वि-ेष महत्व दिया जाता है। सुगम गीत की अपनी स्वतन्त्र विशेषता होने के अतिरिक्त इसमें लोक तथा शास्त्रीय गीतो का सम्मिश्रित प्रभाव होता है सुगम गीतों में यदा-कदा विदेशी गीतों एवं वाद्यों का प्रभाव-जैसे स्वर संयोजन (कार्ड सिस्टम) या विदेशी वाद्योंका प्रयोग भी सम्मिलित रहता है। इसमें स्वर विस्तार तीनों सप्तकों तक होता है। सुगम संगीत के रचनाकार एवं गायकों को संगीत के शास्त्र एवं क्रियात्मक पक्ष की सामान्य जानकारी होना आवश्यक है। सुगम संगीत की रचना मुख्यता स्थाई-अन्तरा दो भागों में होती है। सुगम संगीत के प्रकारों में गीत, प्रार्थना, गज़ल, भजन, शब्द, कव्वाली, समूहगान, वृन्दगान आदि होते है। सुगमगीत भी मुख्यता लोकगीत के समान तालों अर्थात् रुपक (दादरा, कहरवा, खेमटा, दीपचन्दी) आदि में गाया बजाया जाता है। परन्तु भजन आदि रचनाओं में तीनताल,झपताल आदि तालों का भी समावेश किया जाता है।

ध्रुपद

ध्रुपद गायन शैली शास्त्रीय संगीत की प्रचीन गायन शैली है। स्वर, ताल, शब्द एंव लय युक्त शैली ध्रुपद कहलाती है। भरत कृत नाटय शास्त्र में ध्रुवा शब्द का उल्लेख मिलता है। मान कुतुहल ग्रन्थ में ध्रुपद गीतों की ही रचना है। सूरदास, नन्ददास जैसे अष्टछाप संगीतज्ञों के ध्रुपदों कसे देखने पर इसके विषय की विविधता स्पष्ट हो जाती है। ध्रुपद एक गम्भीर गीत होने के कारण, इसमें एक स्वर व अक्षर का गणितीय समन्वय है। इसमें तीव्र, सूलताल, चारताल जैसी तालों का प्रयोग किया जाता है। धुपद की चार बाणियां या बोली या उक्ति प्रचलित हैं'- गोउहार बाणी, डागुर बाणी, खण्डार बाणी और नौहार बाणी ।

धमार

धमार शैली ध्रुपद की तुलना में कुछ हल्की परन्तु गम्भीर गायकी है। धमार की विषयवस्तु अधिकतर होली से सम्बन्धित होती है, जिसमें अधिकतर राधा कृष्ण के होली क्रीडा का वर्णन, श्री कृष्ण की लीलाएँ व उनका क्रियाकला आदि सम्मिलित है। धमार श्रृंगार रस प्रधान गायकी है परन्तु गम्भीर गायकी है।धमार केवल 'धमार' ताल में ही गाया जाता है। धमार की संगत परवावज पर की जाती है। धमार की शैली में ध्रुपद की तरह लयकारी अर्थात् दुगुन, तिगुनी, आड़ आदि में की जाती है और सरगम आदि की ली जाती है।

धमार शैली में राग की शुद्धता प्रधान रहती हैं उस राग विशेष के स्वरों के अतिरिक्त कोई अन्य स्वर नहीं लगाया जा सकता ।

ठुमरी

ठुमरी गायन शैली की गणना शास्त्रीय गायन के वर्ग में न अर्धशास्त्रीय गायन के वर्ग में की जाती है। क्योंकि इसमें रागविशेष के साथ-साथ अनेक रागों का मिश्रण या छाया भी उस एक राग में लाई जा सकती है। इस प्रकार रागों का विशेष बंधन न होकर भी रागों पर आधारित रहने से ही ठुमरी को अर्धशास्त्रीय वर्ग में रखा गया है।

ठुमरी के लिये कुछ हल्के-फुल्के व चंचल प्रकृति के राग ही उपयुक्त माने गए है जैसे-खमाज, पीलू, मांड, काफी, पहाड़ी भैरवी, तिलंग आदि।

ठुमरी गायन में ऋंगार और करूण रस की प्रधानता रहती है। ठुमरी में मींड, खटका, मुर्की तथा गले की हरकत का प्रयोग भाव प्रदर्शन के लिये किया जा सकता है। ठुमरी मुख्यतः दो अंगों से गाई जाती है -पूर्वी और पंजाबी

पूर्वी अंग के अन्तर्गत दो शैलियाँ आती है।

लखनऊ की और बनारस की

लखनऊ की ठुमरी को वाज़िद अली शाह से प्रोत्साहन मिला। इन्होंने "अख़्तर पिया" के नाम से अनेक ठुमिरयो की रचना की। इनके बाद मौजुद्दीन खाँ, गणपत राय भैय्या, बिन्दादीन महाराज आदि लखनऊ की ठुमरी का प्रचार हुआ।

बनारस अंग की ठुमरी में कजरी और चैती आदि लोक संगीत की शैलियों का प्रभाव देखने को मिलता है।

पंजाब अंग की ठुमरी पर पंजाबी लोकगीत व पहाड़ी धुनों का प्रभाव अधिक है।

ठुमरी गायन में हल्की मींड का काम बहुत अधिक होता है। साथ ही छोटी-छोटी तानों द्वारा माधुर्य उत्पन्न किया जाता है।

ठुमरी में राग की शुद्धता की कोई प्रधानता नहीं हैं। कलाकार भावों की स्पष्टता के लिये मुख्य राग के साथ-साथ दो या तीन अन्य रागों का मिश्रण कर सकता है। अतः ठुमरी गायन में राग की शुद्धता अर्थहीन है।

ठुमरी में केवल भावप्रदर्शन ही मुख्य है। ठुमरी भावप्रधान शैली है।

ठुमरी की संगत तबले पर की जाती है।

ठुमरी अधिकतर दीपचन्दी, जतताल, पंजाबी, अद्धा त्रिताल, दादरा, कहरवा व तीन ताल आदि तालों में गाई जाती है। झपताल में गाई जाने वाली ठुमरी 'सादरा' कहलाती है।

आधुनिक समय में पूर्वी अंग की ठुमरियों के लिये रसूलन बाई, सिद्धेश्वरी देवी, गिरजा देवी, कृष्ण बाई, लखनऊ की बेगम अख्तर, अख्तरी बाई आदि गायिकायें प्रसिद्ध है।

तराना

तराना एक प्रकार का आधुनिक गायन है। इसमें गीत के बोल निरर्थक होते है जैसे ता ना दा रे, त दा ऐ, आ दा नी, तोम, त नो म इत्यादि। ताराने में दुत लय का प्रयोग किया जाता है। दुतलय में इन अर्थहीन बोलों को सजाया जाता है। तराना में स्थाई और अन्तरा दो भाग होते हैं। ख्याल गायक अधिकतर ख्याल गायन के पश्चात द्रुतलय में राग का तराना आरम्भ कर देते है जो बहुत सुन्दर लगता है। लय की धीरे-धीरे बढ़त करके अति दुतलय में तराना गाने का प्रचार है। बहादुर सेन, तानरस खाँ और नत्थू खाँ इत्यादि के तराने विशेष रूप से प्रसिद्ध है।

तिरवट

यह भी तराने की तरह गाया जाता है, किंतु तराने से तिरवट की गायकी कुछ कठिन है। तिरवट में मृदंग के बोल अधिक होते हैं। इसे सभी रागों में गाया जा सकता है। वर्तमान समय में तिरवट-गायकी का प्रचार कम हो गया है।

होरी-धमार

जब 'होरी' नाम से गीत को धमार ताल में गाते हैं, तो उसे 'धमार' कहा जाता है। धमार-गायन में प्रायः ब्रज की होली का वर्णन रहता है। धमार में दुगुन, चौगुन, बोल्तान, गमक, इत्यादि का प्रयोग होता है, अतः कठिन गायकी है। धमार के गायकों को स्वर, ताल और राग का अच्छा ज्ञान होना चाहिए। प्रायः देखा जाता है कि धमार में खयाल के समान तानें नहीं ली जातीं।

ग़ज़ल

ग़ज़ल अधिकतर उर्दू या फारसी भाषा में होती हैं। इसके अधिकांश गीतों में आशिक-माशूक का वर्णन पाया जाता है, इसलिए यह श्रृंगाररस-प्रधान गायकी है। ग़ज़ल रूपक, पश्तो, दीपचंदी, दादरा, कहरवा तालों में गाई जाती है। वे ही गायक ग़ज़ल गाने में सफल होते हैं, जिन्हें उर्दू-हिन्दी का अच्छा ज्ञान है और जिनका शब्दोच्चारण ठीक है। ग़ज़ल की अनेक तर्जे हैं। वर्तमान समय में सवाक् चित्रपटों द्वारा ग़ज़ल और गीत का प्रचार बहुत हुआ है। गज़ल का संगीत से गहरा रिश्ता रहा है। यही वजह है कि मेहदी हसन और गज़ल की मलिका कही जाने वाली बेगम अख्तर को गज़ल से अलग करके नहीं देखा जा सकता। इनकी गज़ल गायकी में उपशास्त्रीय संगीत की बारीकियाँ दिखाई देती हैं। हालाँकि अस्सी के दशक में गज़ल को नए अंदाज में पेश किया जाने लगा। पश्चिमी और भारतीय संगीत के मिलान से संगीत की एक अलग धुन पर गज़ल गाई जाने लगी। गज़ल गायकी मे अल्बम का दौर शुरू हुआ और प्रसिद्ध गायकों को रुझान इसकी तरफ हुआ। इसी समय पंकज उधास, जगजीत सिंह और चित्रा सिंह की गज़ल गायकी इसलिए भी प्रसिद्ध हुई, क्योंकि उन्होंने पश्चिमी वाद्य यंत्रों के साथ ही आसान शब्दों वाली गज़लों को अपनाया। गज़ल को लेकर प्रयोग का दौर शुरुआत से ही जारी है। हालाँकि कुछ लोग मानते हैं कि ये बदलाव गज़ल की रूह और मिजाज के साथ अन्याय हैं। हरिहरन जिन्होंने फिल्मी गीतों से लेकर गज़ल की पारंपरिक शैली तक में गज़ल गाई हैं। प्रसिद्ध गज़ल गायक गुलाम अली कहते रहे हैं कि पाकिस्तान से ज़्यादा उनके चाहने वाले भारत में हैं। ऐसे में गज़ल के रंग-रूप में बदलाव भले आया हो और अपनी परंपरागत शैली से हट कर उसे गाया, लिखा जाने लगा हो, लेकिन यह सच है कि आज की पीढ़ी भी गज़लों की दीवानी है। यही वजह है कि आज भी

फिल्मी पर्दे पर गज़ल देखी, सुनी जाती है, तो वहीं गज़लों के निजी अलबम आने का सिलसिला भी बना हुआ है। जहाँ तक भारत का सवाल है तो यहाँ पारंपरिक गज़ल का एक अलग श्रोता और पाठक वर्ग है, जिसे उर्दू और फारसी के शब्दों की अच्छी समझ भी रही है। लेकिन इसके अलावा एक ऐसा वर्ग भी है, जो भले ही उर्दू के कठिन शब्दों का मतलब न समझता हो, इसके बावजूद उसने गज़ल की मिठास को कानों में घुलता महसूस किया है।

कव्वाली

कव्वाली मुस्लिम-समाज की विशेष गायकी है। इसमें अधिकतर फारसी और उर्दू भाषा का प्रयोग होता है। स्थायी-अंतरा के अतिरिक्त इसके बीच-बीच में 'शेर' भी होते हैं। हिंदुओं में भी कव्वाली का प्रचार पाया जाता है। इसके गानेवाले 'कव्वाल' कहलाते हैं। किसी विशेष अवसर पर रात-रात भर कव्वालियाँ होती हैं। कव्वाली के साथ ढोलक बजती हुई अधिक देखी जाती है, साथ-साथ हाथों से तालियाँ भी बजती है। रूपक, पश्तो तथा कव्वाली तालों का इसमें विशेष प्रयोग होता है।

दादरा

'दादरा' एक ताल का भी नाम है, किंतु एक विशेष गायकी को भी 'दादरा' कहते हैं इसकी चाल ग़ज़ल से कुछ मिलती-जुलती होती है। मध्य तथा द्रत लय में दादरा अच्छा मालूम पड़ता है। इसमें प्रायः श्रृंगार-रस के गीत होते हैं।

फिल्म-संगीत

संगीत की कोई ऐसी विधा नहीं, जिसका परिष्कृत और मधुरतम रूप फिल्म-संगीत में प्रयुक्त न हुआ हो। पाकीजा, बसंत बहार, तानसेन, बैजूबावरा, गूँज उठी शहनाई, झनक-झनक पायल बाजे, रानी, रूपमती, नागिन, नवरंग, सरगम तथा नाचे मयूरी इत्यादि अनेक संगीत-प्रधान फिल्मों ने भारतीय संगीत-ज़गत् पर अपना एक अमिट प्रभाव छोड़ा है। गायकी में अब्दुलकरीम खाँ, अमीर खाँ, ओमूकारनाथ ठाकुर, मोघूबाई कुर्डीकर, हीराबाई बड़ौदकर, केसरबाई केरकर, कृष्णराव ृांकर पंडित, गंगूबाई हंगल, वाँद खाँ, सिद्धवेश्वरोदेवी, गिरिजादेवी, नारायणराव व्यास, विनायकराव पटवर्धन, डी.वी. पलुस्कर, निसार हुसैन खाँ, बड़े गुलामअली खाँ, चंदन चौबे, बड़े रामदास, महादेव प्रसाद, डागर ब्रदर्श, मुश्ताक हुसैन खाँ, राजाभैया पूछवाले और विलायत-हुसैन खाँ जैसे घरानेदार कलाकारों के जनता ने पहली बार दर्शनकिए और विभिन्न घरानों की विशेषताओं को जाना।

संदर्भ सूचीः

चंद डॉ. हुकुम, "आधुनिक काल में शास्त्रीय संगीत", पृ.सं. 28, ईस्टर्न बुक लिंकर्स,
दिल्ली-7, संस्करण-1998
परांजपे, शरदचन्द्र, भारतीय संगीत का इतिहास
उत्तर भारतीय संगीत का इतिहास अनुवाद डॉ. अरूण कुमार भातखण्डे सेन
श्रीवास्तव, हरीशचंद्र, संगीत निबंध संग्रह
मिश्रा, शंकरलाल, संगीत निबंध संग्रह
गोविन्द चातक (डॉ.) (सम्पा.): आधुनिक हिन्दी शब्दकोष तक्षशिला प्रकाशन, दिल्ली, 1986, पृ. 587
गोविन्द चातक (डॉ.): आधुनिक हिन्दी :ाब्द कोष, तक्षशिला प्रकाशन दिल्ली 1986, पृ. 486
बसंतः संगीत विशारद, पृ 710-711
आधुनिक कविता में उर्दू के तत्व, डॉ. नरेश, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2016।
उर्दू साहित्य का संक्षिप्त इतिहास, प्रो. एजाज हुसैन, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 2017।